नोट

इकाई–12: विवाह: विवाह की अवधारणा, प्रकार एवं महत्त्व (Concept, Forms, Significance of Marriage)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

12.1 विवाह का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Marriage)

12.2 विवाह की प्रमुख विशेषताएँ एवं महत्त्व (Main Characteristics and Significance of Marriage)

12.3 विवाह के उद्देश्य (Aims of Marriage)

12.4 हिन्दू विवाह के स्वरूप (Forms of Hindu Marriage)

12.5 सारांश (Summary)

12.6 शब्दकोश (Keywords)

12.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

12.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- विवाह का अर्थ तथा महत्त्व की जानकारी।
- विवाह के प्रकारों को जानना।
- हिन्दू विवाह के प्रकारों की जानकारी।
- विवाह के उद्देश्य क्या हैं?

प्रस्तावना (Introduction)

विवाह का एक आधार स्त्री में माँ एवं पुरुष में पिता बनने की इच्छा भी है, जिसकी पूर्ति वैध रूप में विवाह द्वारा ही सम्भव है। विवाह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को संस्कृति का हस्तान्तरण भी करता है। कुछ समाजों में आर्थिक

जीवन विषमलिंगियों के बीच सहयोग एवं श्रम-विभाजन पर आधारित होता है। आर्थिक क्रियाओं को स्त्री-पुरुष द्वारा सामूहिक रूप से सम्पन्न करने की आवश्यकता ने भी विवाह को अनिवार्य बना दिया। इन सभी कारणों से विवाह रूपी संस्था प्रत्येक काल और प्रत्येक समाज में विद्यमान रही है, यद्यपि इसके स्वरूपों में भिन्नता पायी जाती है। भारत में भी विवाह के क्षेत्र में अनेक विभिन्नताएँ पायी जाती हैं। प्राचीन काल से ही यहाँ विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, प्रजातियों, भाषाओं एवं मतों से सम्बन्धित लोग रहते आये हैं जिनकी प्रथाओं, रीति-रिवाजों, संस्कृतियों, संस्थाओं एवं जीवनदर्शन में भिन्नता पायी जाती है। इस भिन्ता ने यहाँ की विवाह संस्था को भी प्रभावित किया है। भारत में विवाह के अनेक रूप जैसे एक-विवाह, बहुपति विवाह, द्वि-विवाह एवं बहुपत्नी विवाह, आदि पाये जाते हैं। कुछ समाजों में विवाह को एक संस्कार माना गया है तो कुछ में एक सामाजिक एवं दीवानी समझौता।

12.1 विवाह का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Marriage)

विवाह का शाब्दिक अर्थ है, 'उद्वह' अर्थात् 'वधू को वर के घर ले जाना।' विवाह को परिभाषित करते हुए **लूसी मेयर** लिखते हैं, "विवाह की परिभाषा यह है कि वह स्त्री-पुरुष का ऐसा योग है, जिससे स्त्री से जन्मा बच्चा माता-पिता की वैध सन्तान माना जाय।" इस परिभाषा में विवाह को स्त्री व पुरुष के ऐसे सम्बन्धों के रूप में स्वीकार किया गया है जो सन्तानों को जन्म देते हैं, उन्हें वैध घोषित करते हैं। तथा इसके फलस्वरूप माता-पिता एवं बच्चों को समाज में कुछ अधिकार एवं प्रस्थितियाँ प्राप्त होती हैं।

डब्ल्यू. एच. आर. रिवर्स के अनुसार, "जिन साधनों द्वारा मानव समाज यौन सम्बन्धों का नियमन करता है, उन्हें विवाह की संज्ञा दी जा सकती है।"

वेस्टरमार्क के अनुसार, "विवाह एक या अधिक पुरुषों का एक या अधिक स्त्रियों के साथ होने वाला वह सम्बन्ध है, जिसे प्रथा या कानून स्वीकार करता है और जिसमें इस संगठन में आने वाले दोनों पक्षों एवं उनसे उत्पन्न बच्चों के अधिकार एवं कर्तव्यों का समावेश होता है।" वेस्टरमार्क ने विवाह बन्धन में एक समय में एकाधिक स्त्री पुरुषों के सम्बन्धों को स्वीकार किया है जिन्हें प्रथा एवं कानून की मान्यता प्राप्त होती है। पति-पत्नी और उनसे उत्पन्न सन्तानों को कुछ अधिकार और दायित्व प्राप्त होते हैं।

बोगार्डस के अनुसार, "विवाह स्त्री और पुरुष के पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की संस्था है।"

मजूमदार एवं **मदान** लिखते हैं, "विवाह में कानूनी या धार्मिक आयोजन के रूप में उन सामाजिक स्वीकृतियों का समावेश होता है जो विषमलिंगियों को यौन-क्रिया और उससे सम्बन्धित सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धों में सम्मिलित होने का अधिकार प्रदान करती है।"

जॉनसन ने लिखा है, "विवाह के सम्बन्ध में अनिवार्य बात यह है कि यह एक स्थायी सम्बन्ध है। जिसमें एक पुरुष और एक स्त्री, समुदाय में अपनी प्रतिष्ठा को खोये बिना सन्तान उत्पन्न करने की सामाजिक स्वीकृति प्रदान करते हैं।"

हॉबल के अनुसार, "विवाह सामाजिक आदर्श-मानदण्डों (Social Norms) की वह समग्रता है जो विवाहित व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धों को, उनके रक्त-सम्बन्धियों, सन्तानों तथा समाज के साथ सम्बन्धों को परिभाषित और नियन्त्रित करती है।"

नोट्स विवाह दो विषमलिंगियों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक, धार्मिक अथवा कानूनी स्वीकृति है। स्त्री-पुरुषों एवं बच्चों को विभिन्न सामाजिक व आर्थिक क्रियाओं में सहगामी बनाना, सन्तानोत्पत्ति करना तथा उनका लालन-पालन एवं समाजीकरण करना विवाह के प्रमुख कार्य हैं।

विवाह के परिणामस्वरूप माता-पिता एवं बच्चों के बीच कई अधिकारों एवं दायित्वों का जन्म होता है।

12.2 विवाह की प्रमुख विशेषताएँ एवं महत्त्व (Main Characteristics and Significance of Marriage)

विवाह की उपर्युक्त परिभाषाओं से विवाह की निम्नलिखित विशेषताएँ उभरकर सामने आती हैं–

1. **विवाह एक मौलिक और सार्वभौमिक सामाजिक संस्था है** जो प्रत्येक देश, काल, समाज और संस्कृति में पायी जाती है।

2. **विवाह दो विषमलिंगियों का सम्बन्ध है।** विवाह के लिए दो विषमलिंगियों अर्थात् पुरुष और स्त्री का होना आवश्यक है। इतना अवश्य है कि कहीं एक पुरुष का एक या अधिक स्त्रियों के साथ और कहीं एक स्त्री का एक पुरुष या अधिक पुरुषों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होता है, परन्तु सामान्यत: आजकल एक-विवाह (Monogamy) की प्रथा का चलन ही पाया जाता है।

3. **विवाह को मान्यता उसी समय प्राप्त होती है जब उसे समाज की स्वीकृति मिल जाती है।** यह स्वीकृति प्रथा या कानून के द्वारा अथवा धार्मिक संस्कार के रूप में हो सकती है। सामाजिक स्वीकृति के अभाव में यौन सम्बन्धों को अनुचित एवं अनैतिक माना जाता है।

4. **विवाह संस्था के आधार पर लैंगिक या यौन सम्बन्धों को मान्यता प्राप्त होती है।** अन्य शब्दों में यह संस्था पति-पत्नी को एक-दूसरे के साथ यौन सम्बन्धों का अधिकार एवं आज्ञा प्रदान करती है।

5. **वेस्टरमार्क ने विवाह को एक सामाजिक संस्था के अतिरिक्त एक आर्थिक संस्था भी माना है।** इसका कारण यह है कि विवाह सम्बन्ध के आधार पर पति-पत्नी के सम्पत्तिक अधिकार भी निश्चित होते हैं।

6. विवाह संस्था की एक विशेषता यह है कि **यह यौन इच्छाओं की पूर्ति के साथ-साथ सन्तानोत्पत्ति एवं समाज की निरन्तरता को बनाये रखने की आवश्यकता की पूर्ति भी करती है।** यह संस्था व्यक्तित्व के विकास की जैविकीय, मनोवैज्ञानिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है।

7. **विवाह संस्था व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के निर्धारण में योग देती है।** विवाह की इस विशेषता का इस दृष्टि से काफी महत्त्व है कि विवाह सम्बन्ध के आधार पर उत्पन्न सन्तानों को ही समाज में वैधता या मान्यता प्राप्त होती है। अवैध सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तानों की सामाजिक स्थिति वैध सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तानों की तुलना में काफी नीची होती है, उनकी प्रतिष्ठा कम होती है।

8. **विवाह से सम्बन्धित पद्धतियाँ विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न होती हैं।** प्रत्येक समाज की विवाह-पद्धति उस समाज की प्रथाओं, मान्यताओं और संस्कृति पर निर्भर करती है और ये अलग-अलग समाजों में भिन्न-भिन्न होती हैं।

9. **विवाह सम्बन्ध एक स्थायी सम्बन्ध है।** विवाह के आधार पर पति-पत्नी के बीच स्थायी सम्बन्ध की स्थापना होती है। यौन इच्छाओं की पूर्ति, सन्तानोत्पत्ति, बालकों का पालन-पोषण तथा उनके समाजीकरण एवं व्यक्तित्व के विकास की दृष्टि से विवाह सम्बन्ध का स्थायी होना आवश्यक है। बिना स्थायी सम्बन्ध ही स्थापना के पारिवारिक जीवन की दृढ़ता खतरे में पड़ जाती है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें–

1. विवाह के लिए दो ········ अर्थात् पुरुष और स्त्री का होना आवश्यक है।
2. विवाह के आधार पर पति-पत्नी के बीच ········ की स्थापना होती है।
3. विवाह संस्था व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के ········ में योग देती है।

12.3 विवाह के उद्देश्य (Aims of Marriage)

जब हम विवाह के उद्देश्यों पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि विवाह दो विषमलिंगियों को यौन सम्बन्ध स्थापित करने की सामाजिक या कानूनी स्वीकृति प्रदान करता है। विवाह ही परिवार की आधारशिला है और परिवार में ही बच्चों का समाजीकरण एवं पालन-पोषण होता है। समाज की निरन्तरता विवाह एवं परिवार से ही सम्भव है। यह नातेदारी का भी आधार है। विवाह के कारण कई नातेदारी सम्बन्ध पनपते हैं। विवाह आर्थिक हितों की रक्षा एवं भरण-पोषण के लिए भी आवश्यक है। विवाह संस्था व्यक्ति को शारीरिक, सामाजिक एवं मानसिक सुरक्षा प्रदान करती है। **मरडॉक ने 250 समाजों का अध्ययन करने पर सभी समाजों में विवाह के तीन उद्देश्यों का प्रचलन पाया–**1. **यौन सन्तुष्टि,** 2. **आर्थिक सहयोग,** 3. **सन्तानों का समाजीकरण एवं लालन-पालन।** संक्षेप में विवाह के उद्देश्यों को हम इस प्रकार से प्रकट कर सकते हैं–

1. यौन इच्छाओं की पूर्ति एवं समाज में यौन क्रियाओं का नियमन करना।
2. परिवार का निर्माण करना एवं नातेदारी का विस्तार करना।
3. वैध सन्तानोत्पत्ति करना व समाज की निरन्तरता को बनाये रखना।
4. सन्तानों का लालन-पालन एवं समाजीकरण करना।
5. स्त्री-पुरुषों में आर्थिक सहयोग उत्पन्न करना।
6. मानसिक सन्तोष प्रदान करना।
7. माता-पिता एवं बच्चों में नवीन अधिकारों एवं दायित्वों को जन्म देना।
8. संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण करना।
9. धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों की पूर्ति करना।
10. सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

स्पष्ट है कि विवाह केवल वैयक्तिक संतुष्टि का साधन मात्र ही नहीं है? वरन् सामजिक क्रिया-विधि भी है जिससे समाज की संरचना को सुदृढ़ता प्राप्त होती है।

मजूमदार और मदान के शब्दों में, "विवाह से वैयक्तिगत स्तर पर शारीरिक (यौन) और मनोवैज्ञानिक (संतान प्राप्ति) संतोष प्राप्त होता है, तो व्यापक सामूहिक स्तर पर इससे समूह और संस्कृति के अस्तित्व को बनाए रखने में सहायता मिलती है।"

टास्क विवाह के क्या-क्या उद्देश्य हैं? संक्षेप में वर्णन करो।

विवाह के रूप

विवाह के अनेक प्रकार होते हैं अगर हम विभिन्न समाजों में प्रचलित विवाह का अंतर्सांस्कृतिक अध्ययन करें तो हमारा साक्षात्कार ऐसे अनेक नियम-कायदों से होता है जो विवाह का स्वरूप तय करने के लिए चुनाव में प्राथमिकताएँ, अनुशंसाएँ और निषेध प्रदान करते हैं।

इससे पूर्व कि हम विवाह के विभिन्न रूपों पर चर्चा करें माता-पिता और बच्चों के बीच परस्पर यौन संबंधों पर आरोपित सार्वभौमिक वर्जना या निषेध का जिक्र समीचीन है। इसे निषिद्ध निकटाभिगमन (इंसेस्ट) कहा जाता है।

विवाह के कुछ वर्गीकरणों पर हम निम्नलिखित ढंग से विचार कर सकते हैं–

(क) जीवन साथियों की संख्या के आधार पर विवाह को दो मुख्य प्रकारों में विभक्त किया जाता है– एक विवाह और बहु विवाह।

नोट

विवाह में पति द्वारा एक पत्नी एवं पत्नी द्वारा एक पति से परिणय एक विवाह कहलाता है।

विवाह में एक से अधिक जीवन साथियों से परिणय का प्रचलन बहुविवाह कहलाता है। बहुविवाह दो तरह के हो सकते हैं: (*i*) बहुपत्नी विवाह (*ii*) बहुपति विवाह।

जब कोई पुरुष एक से अधिक स्त्रियों से विवाह करता है तो उसे बहुपत्नी विवाह कहते हैं। जब कोई व्यक्ति अनेक बहनों से शादी करता है तो यह भगिनी संघीय बहुपत्नी विवाह (सोरोरल पोलीगाइनी) कहलाता है।

जब कोई स्त्री एक समय में एक से अधिक पुरुषों से विवाह करती है तो उसे बहुपति विवाह (पोलीएन्ड्री) कहते हैं। बहुपति विवाह दो तरह से हो सकता है–भ्रातृय या 'एडेल्फिक' बहुपति विवाह और आभ्रातृय बहुपति विवाह और आभ्रातृय बहुपति विवाह। जब कोई स्त्री एक समय में अनेक भाइयों से विवाह करती है तो इसे भ्रातृय (फैटर्नल) बहुपति विवाह के नाम से जाना जाता है। महाभारत में द्रौपदी और पाण्डव भाइयों का विवाह इसका महत्त्वपूर्ण उदाहरण है। टोडा जनजाति में यह विवाह काफी प्रचलित है। जब किसी स्त्री के अनेक पति होते हैं जो अनिवार्यत: एक दूसरे के भाई नहीं होते हैं तो ऐसे विवाह को आभ्रातृय पति विवाह करते हैं।

इस संदर्भ में हम दो प्रकार के बहुविवाहों का जिक्र कर सकते हैं जिन्हें देवर-भाभी विवाह (लेविरेट) और जीजा-साली विवाह (सोरोरेट) कहते हैं।

अपने मृत भाई या दिवंगत भाई की निस्संतान विधवा पत्नी से किसी व्यक्ति का विवाह 'लेविरेट' कहलाता है। जिस किसी संदर्भ में पति की मृत्यु के बाद वास्तविक प्रकार के 'लेविरेट' का चलन है। वहाँ मृतक के भाइयों में से एक का यह नैतिक कर्त्तव्य हो जाता है कि वह विधवा से विवाह करे। उनके सहवास से जो बच्चे पैदा होते हैं उन्हें मृत व्यक्ति की संततियों के रूप में मान्यता दी जाती है।

जहाँ वास्तविक सोरोरेट का चलन है, वहाँ बाँझ स्त्री का पति उसकी बहन से शादी करता है और कम से कम कुछ बच्चों को जो उनके सहवास से उत्पन्न होते हैं, नि:संतान पत्नी के बच्चों के रूप में गिना जाता है। सोरोरेट पद का इस्तेमाल प्रथागत दृष्टि से भी होता है जिसके द्वारा पत्नी की मृत्यु के बाद उसके सगे-संबंधी विधुर को मृतका की बहिन से विवाह करने की अनुमति देता है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि जो बच्चे इस स्त्री से पैदा होते हैं वे उस मृत बहन के नहीं बल्कि जीवित स्त्री के माने जाते हैं।

'लेविरेट' और 'सोरोरेट' अंतरपारिवारिक दायित्वों की स्वीकृति पर बल डालते हैं और विवाह को सिर्फ दो व्यक्तियों के बीच नहीं बल्कि दो परिवारों के बीच बंधन के रूप में मान्यता देते हैं।

हम एक और प्रकार के बहुविवाह का जिक्र कर सकते हैं जिसे समूह विवाह (ग्रुप मैरेज) कहते हैं। जब दो या दो से अधिक दूल्हों का एक ही साथ दो या अधिक दूल्हनों से विवाह होता है तो इसे समूह विवाह कहा जाता है। यह बहुपत्नी विवाह और बहुपति विवाह का मिला-जुला रूप है जो ब्राजील के काइन गाँगू नामक जनजाति में और मार्क्वेसनों में भी यदा-कदा देखने में आता है।

(ख) जीवन-साथी के चुनाव के आधार पर वर्गीकरण: जब विवाह के लिए जीवन साथियों का चुनाव एक दूसरे के द्वारा किया जाता है तो इसे रोमांस पर आधारित विवाह या प्रेम-विवाह कहते हैं। जब इनका चुनाव अभिभावकों या संबंधियों या मित्रों द्वारा होता है तो इसे व्यवस्थित विवाह की संज्ञा दी जाती है।

जब विवाह सिर्फ उन्हीं लोगों के बीच अनुशंसित होता है जो एक ही समूह से जुड़े होते हैं तो उसे अतर्विवाह कहते हैं। इसमें समूह से बाहर विवाह निषिद्ध होता है। हम इस संदर्भ में जनजातीय अंतर्विवाह, जातीय अंतर्विवाह, वर्गाधारित अंतर्विवाह, प्रजातीय अंतर्विवाह आदि का उल्लेख कर सकते हैं। विचित्र, नई और अज्ञात चीजों के प्रति हम सबके मन में जो गहरा भय होता है उसके कारण लगभग सभी भारतीय जनजातियाँ अंतर्विवाह को मान्यता देती हैं।

कभी कभार किसी खास संबंधी से विवाह को प्राथमिकता दी जाती है या उसकी अनुशंसा की जाती है। अत: गोण्ड जन-जाति के लोगों के लिए अपने तृतीयक नातेदारों से विवाह करना जरूरी होता है। अगर कोई व्यक्ति अपने तयी इस प्रावधान की अवमानना करता है तो कमाने वाले पक्ष को भरपाई के रूप में उसे जुर्माना देना पड़ता है। गसन ने पाया कि गोण्डों में होने वाले 54% विवाह इसी कोटि के थे। खड़िया और उराँव जनजातियों में भी तृतीयक नातेदारों

से विवाह की प्रथा है। यही चीज खासी जनजाति के लोगों में भी देखने को मिलती है पर खासी पुरुष अपने पिता के मरने के बाद ही अपनी बुआ की शादी कर सकता है।

(ग) लेवी-स्ट्रास ने कहा कि प्राथमिकता और चयन पर आधारित विवाह का मुख्य उद्देश्य किसी जनजाति के अंदर एकात्मकता की भावना को मज़बूत बनाना है। अत: किसी व्यक्ति द्वारा अपनी माँ के भाई की पुत्री से विवाह उन्हीं संदर्भों में देखा जाता है जो प्रकृति से मातृस्थानीय हैं।

जब विवाह उन व्यक्तियों के बीच निषिद्ध होता है जो एक ही समूह से संबंधित होते हैं तो इसे बहिर्विवाह कहते हैं। हिन्दुओं में गोत्र और प्रवर के आधार पर बहिर्विवाह का प्रचलन है और इसी कारण ऐसे लोगों के बीच विवाह की अनुमति नहीं दी जाती है जो एक ही गोत्र या प्रवर से संबंधित होते हैं। इसके अलावा पिण्ड बहिर्विवाह का भी चलन है। हिन्दू समाज में एक पिण्ड के भीतर विवाह निषिद्ध है। पिण्ड का अर्थ सदृश पितृत्व होता है। मातृ पक्ष की पाँच पीढ़ियों तक और पितृ-पक्ष की सात पीढ़ियों तक लोग 'सपिण्ड' माने जाते हैं एवं उनके बीच विवाह नहीं हो सकता है। कुछ भारतीय जनजाति में ग्राम बहिर्विवाह का प्रचलन है। यह नियम बिहार में छोटानागपुर की मुण्डा और अन्य जनजातियों में प्रचलित हैं। नागालैंड में नागा जनजाति 'खेलों' में विभक्त होती हैं। खेल किसी खास स्थान के निवासियों को दिया गया नाम है और एक खेल के लोग आपस में विवाह नहीं कर सकते हैं।

(घ) विवाहितों की प्रस्थिति के आधार पर वर्गीकरण: 'जो लोग उम्र' शिक्षा, आचरण, आर्थिक स्थिति, सामाजिक प्रस्थिति आदि की दृष्टि से शुद्धता दर्शाते हैं उनके बीच विवाह को समविवाह कहा जाता है। दूसरी और अगर विवाहित जोड़े इन मानदण्डों के संदर्भ में अत्यधिक भेद जताते हैं तो इस तरह के विवाह को विषम विवाह कहा जाता है।

असमान सामाजिक प्रस्थिति वाले पुरुष और स्त्री के बीच विवाह के आधार पर भी वर्गीकरण होता है। जब कोई पुरुष तुलनात्मक दृष्टिकोण से निम्नतर सामाजिक स्तृत से संबंधित स्त्री से विवाह करता है तो इसे उर्ध्व विवाह या अनुलोम विवाह कहा जाता है। इस विवाह के कारण पुरुष को आमतौर पर लिहाज से अपनी सामाजिक मर्यादा में किसी तरह की कोई क्षति नहीं झेलनी पड़ती है कि उसने निम्नतर सामाजिक प्रस्थिति वाली स्त्री से शादी कर ली है। जब उच्चत्तर सामाजिक स्तृत वाली स्त्री तुलनात्मक रूप से निम्नतर स्तृत वाले पुरुष से विवाह करती है तो उसे अधोविवाह या प्रतिलोम विवाह कहा जाता है। इस तरह के विवाह के फलस्वरूप स्त्री को सामाजिक घृणा, उपेक्षा और यहाँ तक कि कुछ समाजों में निष्कासन की पीड़ा भोगनी पड़ती है। पुरुष और स्त्री के संदर्भ में इस तरह का भेदभाव भरा मूल्यांकन सभी समाजों में नज़र आता है। अत: बाशम कहते हैं: "यह भेद अन्य समाजों में भी दिखाई देता है। उदाहरण के लिए विक्टोरिया कालीन इंग्लैण्ड में कुलीन वर्ग का कोई व्यक्ति अगर किसी अभिनेत्री से विवाह करता था तो उसे शायद ही कभी इस तरह की घृणा और उपेक्षा का सामना करना पड़ता था जिसका सामना किसी सामान्य व्यक्ति से विवाह करने के बाद भद्र परिवार की स्त्री को करना पड़ता था।"

(ङ) बंद विवाह व्यवस्था और खुली विवाह व्यवस्था के बीच भेद: जिन समाजों में यह प्रावधान होता है कि वर वधू का चुनाव लोगों की एक या अधिक मनोनीत कोटियों में से ही हो उनमें बंद या निर्मुक्त विवाह व्यवस्था प्रचलित होती है। जिन समाजों में इस तरह की अनुशंसाओं के लिए कोई जगह नहीं होती उनमें खुली विवाह व्यवस्था का चलन होता है। खुली या मुक्त विवाह व्यवस्था में लोगों का एकमात्र समूह जो विवाह के योग्य नहीं माना जाता है वैसे लोगों का समूह होता है जो निषिद्ध निकटाभिगमन के दायरे में आते हैं।

उपर्युक्त ढंग से वर्गीकृत विवाह-रूपों के अलावा, अन्य अनेक प्रकार के विवाहों का भी अस्तित्व होता है।

उदाहरणस्वरूप सहचारिता विवाह का उल्लेख किया जा सकता है "जो दो लोगों के बीच इस आपसी तालमेल के आधार पर विवाह है कि जब तक बच्चे पैदा नहीं होते हैं तब तक सिर्फ पारस्परिक सहमति के आधार पर वैवाहिक संबंध का विच्छेद हो सकता है।"

उपपत्नीत्व का जिक्र भी हम कर सकते हैं जो बिना विवाह के पति व पत्नी के रूप में एक साथ रहने की अवस्था है।

नोट

प्रायोगिक विवाह की व्यवस्था के अंतर्गत एक स्त्री व एक पुरुष को अस्थायी तौर पर विवाहित जीवन जीने की अनुमति दी जा सकती है ताकि वे यह समझ सकें कि स्थायी तौर पर उनके लिए एक साथ रह पाना संभव है या नहीं है।

हिन्दुओं तथा मुसलमानों में विवाह

हिन्दुओं में विवाह एक पवित्र धार्मिक कार्य होता है। हर हिन्दू के लिए विवाह आवश्यक होता है क्योंकि इसके बगैर हिन्दू पुरुष ग्रहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं कर सकता है। प्राचीन धर्मशास्त्रीय विद्वानों ने जो चार जीवन चरण (आश्रम) नियत किए थे उनमें से वह दूसरा है। विवाह की आवश्यकता एक-दूसरे कारण से भी होती है। जन्म, मृत्य और पुनर्जन्म के बंधन के छुटकारा पाने के लिए ही संतान और खासकर पुत्र की प्राप्ति आवश्यक होती है। यह अवधारणा हिन्दुओं में प्रचलित आत्मा की अनश्वरता और पुनर्जन्म के विचार पर आधारित है।

हिन्दू धर्मशास्त्रियों ने विवाह को संस्कारों में से एक माना है। दूसरे शब्दों में यह उन पावनकारी अनुष्ठानों में से एक है जो हर हिन्दू के लिए जरूरी है। इसके अंतर्गत जो विधि-विधान होते हैं उनका उद्देश्य किसी व्यक्ति को विभिन्न सीमाओं, त्रुटियों और कमजोरियों से मुक्त कराना है जो मानवकाया के रक्त-माँस-मज्जा में फैले होते हैं। कोई व्यक्ति इन सीमाओं या त्रुटियों से पलायन नहीं कर सकता। जहाँ तब सम्भव हो हम इन खामियों से ऊपर उठने की चेष्टा कर सकते हैं या ऐसा हमें ही करना चाहिए। संस्कारों या इन विधि-विधानों का निष्पादन इन उद्देश्य की पूर्ति करता है। हिन्दू विधि वेत्ता मनु ने संस्कार के उद्देश्य को इन शब्दों में प्रकट किया है: ब्रह्मयम् क्रियनते तनु:। तात्पर्य यह कि हर व्यक्ति को अपने शरीर, मस्तिष्क और आत्मा को इस तरह शुद्ध रखना चाहिए कि अनुराग और अलगाव, सुखभोग और त्याग, आत्माभिव्यक्ति और आत्मोत्सर्ग किसी व्यक्ति के जीवन में संतुलित रूप से घुल-मिल जाएँ और जीवनमरण के बंधन से स्वयं को स्वतंत्र करने में उसे सक्षम बना दें। विवाह एक संस्कार है क्योंकि नवविवाहित जोड़े को वैवाहिक बंधन का प्रयोग करने का परामर्श दिया जाता है ताकि देह और काम-वासना के बंधन तोड़े जा सकें।

अत: यह आश्चर्यजनक नहीं है कि विवाह की हिन्दू-अवधारणा के पीछे एक धार्मिक अनुशक्ति (सैंक्शन) की पृष्ठभूमि होती है। विवाह संस्कार के अंतर्गत अनेक अनुष्ठानों और यज्ञ-याजनों का निष्पादन होता है। 'कन्यादान' या वधू के पिता द्वारा वर को अपने पुत्री का दान, आहुति की अग्नि को दैवी साक्षी और संस्कार को पवित्र करने वाली अग्नि के रूप में प्रज्वलित करना (विवान-होम), वर द्वारा वधू के हाथों को थामना (पाणिग्रहण) और आहुति की अग्नि के चारों ओर वर और वधू द्वारा सात फेरे लगाना, वर का वधू से आगे-आगे चलना (सप्तपदी) आदि विवाह से संबंधित महत्त्वपूर्ण धार्मिक अनुष्ठान हैं। इन सबकी समाप्ति के बाद दुल्हा दुल्हन को लेकर चला जाता है। संस्कृत शब्द 'विवाह' का अर्थ है लेकर चले जाना।

विवाह अपनी ही जाति में (वर्ण) में होना अनिवार्य है। पर व्यवहार में यह अपनी उपजाति के भीतर होता है। अपने लिए वर या वधू खोजने के क्रम में हर किसी को अनिवार्य रूप से मातृपक्ष की पाँच पीढ़ियों (सपिण्ड) की सीमा से बाहर और पितृपक्ष की सात पीढ़ियों (गौत्र और प्रवर से इतर) से बाहर जाना होगा।

हिन्दू विधि-ग्रन्थों में अनेक प्रकार के विवाहों की चर्चा है। जब कोई पिता अच्छे चरित्र और विद्या वाले किसी व्यक्ति को अपनी पुत्री सौंप देता है तो इसे ब्रह्म विवाह कहते हैं। जिस व्यक्ति को पुत्री सौंपी जाती है वह अगर पुजारी या पुरोहित है तो इस तरह के विवाह को दैव कहते हैं। जब कोई संभावित जमाता लड़की के पिता से उपहारस्वरूप लड़की हासिल करने से पूर्व एक साँड या एक गाय सौगात के रूप में देता है तो इसे आर्ष विवाह कहते हैं। पर इस तरह का विवाह खरीदारी या क्रय द्वारा होने वाले विवाह से भिन्न है जिसे असुर विवाह कहते हैं। ब्राह्मणों और क्षत्रियों के संदर्भ असुर विवाह की निन्दा की गई है पर मनु ने वैश्यों और शूद्रों के संदर्भ में इसे अच्छा माना है। जब कोई पिता किसी व्यक्ति का अच्छी तरह से सम्मान करने के बाद उसे उपहार रूप में अपनी पुत्री दे देता है और विवाहित जोड़े को साथ-साथ धर्म का निर्वाह करने का उपदेश देता है तो इसे प्राजापत्य विवाह कहते हैं। पारस्परिक प्रेम और अनुबंध के आधार पर होने वाले विवाह को गंधर्व विवाह कहते हैं। अपहरण द्वारा विवाह राक्षस

नोट

विवाह कहलाता है और इसे कानूनी तौर पर वैध माना जाता है। पर अगर कोई लड़की सोई हुई हो, नशे में हो या मानसिक रूप से असंतुलित हो तो उसके साथ सहवास और विवाह को पैशाच विवाह कहते हैं। सभ्य-जीवन के तौर-तरीकों के उल्लंघन के कारण इसकी तीव्र भर्त्सना की गई है।

यह ध्यातव्य है कि हिन्दू विधि वेत्ताओं ने विभिन्न प्रकार के विवाहों को मान्यता देकर अनेक जटिल सामाजिक समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने की चेष्टा की है। अतीत में उत्तर-पश्चिम की ओर से भारत पर अनेक आक्रमण हुए हैं। देश के भीतर भी गैर-आर्यो की एक बहुत बड़ी संख्या दृष्टिगोचर हुई है। जिनके साथ आर्यो का संपर्क रहा है। एक के बाद एक आप्रवासी और स्थानीय गैर आर्यो के समूहों के कारण अनैतिक यौन-संबंध के मामले भी सामने आए और परिणामस्वरूप अविवाहित स्त्रियों के बच्चे हो गए। बड़ी तादाद में अवैध बच्चों की उपस्थिति के कारण जो समस्याएँ उठ खड़ी हुई उनका समाधान अपहरण, पलायन आदि को विवाह के कुछ रूपों के रूप में मान्यता देने से ही संभव हो सका यद्यपि इस तरह के विवाहों को वांछित नहीं माना जाता था। इस पक्ष पर टिप्पणी करते हुए ए.एल. बाशम कहते हैं: "बड़े आश्चर्यजनक ढंग से संबंधों के एक व्यापक दायरे को मान्यता दी गई ताकि अपने प्रेमी द्वारा शील-भंग की शिकार या बाहरी उठाईगीरों द्वारा जबरन ले जाई गई लड़की को पत्नी का वैधानिक अधिकार मिल सके और उसके बच्चे को नाजायज होने का दुख नहीं भोगना पड़े"।

क्या आप जानते हैं विवाह संस्कार के अंतर्गत अनेक अनुष्ठानों और यज्ञ-याजनों का निष्पादन होता है।

मुस्लिमों में विवाह

मुस्लिम विवाह धार्मिक कृत्य नहीं है बल्कि एक धर्म निरपेक्ष बंधन है। साहचर्य की निषिद्ध सीमाएं काफी कम हैं। अत: चचेरे भाई-बहनों और प्राथमिक समान्तर नातेदारों में भी विवाह हो सकता है। कुछ मुसलमान पुरुष अनेक स्त्रियों से विवाह कर सकता है। शर्त केवल यह है कि दो बहनें या बुआ और भतीजी एक ही व्यक्ति की पत्नी नहीं हो सकती और एक समय में कोई व्यक्ति चार से अधिक पत्नियाँ नहीं रख सकता। मुसलमान अपनी दिवंगत पत्नी की बहन से या अपने बच्चों के सास-ससुर से शादी कर सकते हैं। मुसलमान गैर-मुस्लिम स्त्री से भी शादी कर सकता है अगर वह यहूदी या ईसाई जैसे किसी गैर-मूर्तिपूजक धार्मिक संप्रदाय से संबंधित है। पर मुसलमान स्त्री को यही अधिकार समान रूप से प्राप्त नहीं हैं।

एक कानूनी-दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर के द्वारा विवाह को सुदृढ़ अनुबंध का रूप दिया जाता है जिसे तोड़ा भी जा सकता है पर तलाक पति के विशेषाधिकार के अंतर्गत आने वाली चीज है। वह बिना किसी कारण के तलाक दे सकता है। कम से कम दो गवाहों की उपस्थिति में अगर सिर्फ तीन बार तलाक शब्द कहा जाए तो पति और पत्नी के बीच संबंध-विच्छेद हो सकता है। पर इसके बाद पति को भरपाई के रूप में कुछ नियत राशि पत्नी को देनी पड़ती है। यह एक अनुबंध के तहत होता है जिसके द्वारा मृत्यु और तलाक की स्थित में पत्नी क्षति पूर्ति के रूप में पति की संपत्ति का एक खास हिस्सा पाने की हकदार होती है। पत्नी विवाह के बंधन से मुक्त हो सकती है अगर इस दृष्टि से उसने पति की सहमति हासिल कर ली हो। यह सहमति अनिवार्य है अगर पति और पत्नी संबंध-विच्छेद आपसी सहमति के आधार पर होता है तो इसे 'मुबारत' कहा जाता है। कुछ खास परिस्थितियों में इस्लाम पत्नी को एक पक्षीय कदम उठाने की अनुमति देता है। विधवा स्त्री का पुनर्विवाह भारतीय मुसलमानों में आमतौर पर प्रचलित है।

12.4 हिन्दू विवाह के स्वरूप (Forms of Hindu Marriage)

विवाह के स्वरूप से हमारा तात्पर्य विवाह बन्धन में बंधने की विभिन्न विधियों से है। मनु ने आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख किया है, किन्तु **वशिष्ठ** ने केवल छ: प्रकार के विवाहों को ही बताया है। मनु का कहना है कि प्रथम चार प्रकार के विवाह ब्राह्म, दैव, आर्ष और प्रजापत्य श्रेष्ठ एवं धर्मानुसार हैं जबकि शेष चार असुर, गन्धर्व, राक्षस और पिशाच निकृष्ट कोटि के हैं। प्रथम चार प्रकार के विवाहों से उत्पन्न यशस्वी, शीलवान, सम्पत्तिवान और

नोट

अध्ययनशील होती है जबकि शेष चार प्रकार के विवाहों से उत्पन्न सन्तान दुराचारी, धर्म विरोधी एवं मिथ्यावादी होती है। यहाँ इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि हिन्दू शास्त्रकार स्त्री की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं सम्मान को बनाये रखने के प्रति बड़े सजग थे इसलिए ही उन्होंने पिशाच एवं राक्षस विवाहों को भी सामाजिक स्वीकृति प्रदान की है। हिन्दू विवाह के प्रमुख आठ स्वरूप निम्न प्रकार हैं–

1. **ब्राह्म विवाह** (Brahma Marriage)–यह विवाह सभी प्रकार के विवाह में श्रेष्ठ माना गया है। मनु ने ब्राह्म विवाह को परिभाषित करते हुए लिखा है, "वेदों के ज्ञाता शीलवान वर को स्वयं बुलाकर, वस्त्र एवं आभूषण आदि से सुसज्जित कर पूजा एवं धार्मिक विधि से कन्या दान कराना ही ब्राह्म विवाह है।" **गौतम** ने धर्मसूत्र में ब्राह्म विवाह का वर्णन करते हुए लिखा है, "वेदों का विद्वान अच्छे आचरण वाला, बन्धु-बान्धवों से सम्पन्न, शीलवान वर को वस्त्र के जोड़े एवं अलंकारों से सुसज्जित कन्या दान देना की ब्राह्म विवाह है।" **याज्ञवल्क्य** लिखते हैं, "ब्राह्म विवाह उसे कहते हैं जिसमें वर को बुलाकर शक्ति के अनुसार अलंकरों से अलंकृत कर कन्यादान दिया जाता है। ऐसे विवाह से उत्पन्न पुत्र इक्कीस पीढ़ियों को पवित्र करने वाला होता है।"

2. **दैव विवाह** (Daiva Marriage)–गौतम एवं याज्ञवल्क्य ने दैव विवाह के लक्षण का उल्लेख इस प्रकार किया है–वेदों में दक्षिणा देने के समय पर यज्ञ कराने वाले पुरोहित को अलंकारों से सुसज्जित कन्या दान ही 'दैव' विवाह है। मनु लिखते हैं, "सद्कर्म में लगे पुरोहित को जब वस्त्र और आभूषणों से सुसज्जित कन्या दी जाती है तो इसे दैव विवाह कहते हैं।" प्राचीन समय में यज्ञ और धार्मिक अनुष्ठानों का अधिक महत्त्व था। जो ऋषि अथवा पुरोहित इन पवित्र धार्मिक कार्यों को सम्पन्न कराता यजमान उससे अपनी कन्या का विवाह कर देता था। मनु कहते हैं कि इस प्रकार के विवाह से सम्पन्न सन्तान सात पीढ़ी ऊपर की एवं सात पीढ़ी नीचे के व्यक्तियों का उद्धार करा देती है। कुछ स्मृतिकारों ने इस प्रकार के विवाह की आलोचना की है क्योंकि कई बार वर एवं वधू की आयु में बहुत अन्तर होता था। वर्तमान समय में इस प्रकार के विवाह नहीं पाये जाते। **अल्टेकर** लिखते हैं कि "दैव विवाह वैदिक यज्ञों के साथ-साथ लुप्त हो गये।"

3. **आर्ष विवाह** (Arsha Marriage)–इस प्रकार के विवाह में विवाह का इच्छुक वर कन्या के पिता को एक गाय और एक बैल अथवा इनके दो जोड़े प्रदान करके विवाह करता है। गौतम ने धर्मसूत्र में लिखा है, "आर्ष विवाह में वह कन्या के पिता को एक गाय और एक बैल प्रदान करता है।" याज्ञवल्क्य लिखते हैं कि दो गाय लेकर जब कन्यादान किया जाय तब उसे आर्ष विवाह कहते हैं। मनु लिखते हैं, "गाय और बैल का एक युग्म वर के द्वारा धर्म कार्य हेतु कन्या के लिए देकर विधिवत् कन्यादान करना आर्ष विवाह कहा जाता है। आर्ष का सम्बन्ध ऋषि शब्द से है। जब कोई ऋषि किसी कन्या के पिता को गाय और बैल भेंट के रूप में देता है तो यह समझ लिया जाता था कि अब उसने विवाह करने का निश्चय कर लिया है। कई आचार्यों ने गाय व बैल भेंट करने को कन्या मूल्य माना है, किन्तु यह सही नहीं है, गाय व बैल भेंट करना भारत जैसे देश में पशुधन के महत्त्व को प्रकट करता है। बैल को धर्म का एवं गाय को पृथ्वी का प्रतीक माना गया है जो विवाह की साक्षी के रूप में दिये जाते थे। कन्या के पिता को दिया जाने वाला जोड़ा पुनः वर को लौटा दिया जाता था। इन सभी तथ्यों के आधार पर स्पष्ट है कि आर्ष विवाह में कन्या मूल्य जैसी कोई बात नहीं है। वर्तमान में इस प्रकार के विवाह प्रचलित नहीं हैं।"

4. **प्रजापत्य विवाह** (Prajapatya Marriage)–प्रजापत्य विवाह भी ब्राह्म विवाह के समान होता है। इसमें लड़की का पिता आदेश देते हुए कहता है "तुम दोनों एक साथ रहकर आजीवन धर्म का आचरण करो।" याज्ञवल्क्य कहते हैं कि इस प्रकार के विवाह से उत्पन्न सन्तान अपने वंश की तरह पीढ़ियों को पवित्र करने वाली होती है। वशिष्ठ और आपस्तम्ब ने प्रजापत्य विवाह का कहीं उल्लेख नहीं किया है। डा. अल्टेकर का मत है कि विवाह के आठ प्रकार की संख्या को पूर्ण करने हेतु ही इस पद्धति को पृथक् रूप दे दिया गया।

5. **असुर विवाह** (Asur Marriage)–मनु लिखते हैं, "कन्या के परिवार वालों एवं कन्या को अपनी शक्ति के अनुसार धन देकर अपनी इच्छा से कन्या को ग्रहण करना असुर विवाह कहा जाता है।" याज्ञवल्क्य एवं गौतम का मत है कि अधिक धन देकर कन्या को ग्रहण करना असुर विवाह कहलाता है। कन्या मूल्य देकर सम्पन्न किये जाने वाले सभी विवाह असुर विवाह की श्रेणी में आते हैं। कन्या मूल्य देना कन्या का सम्मान करना है साथ ही कन्या

के परिवार की उसके चले जाने की क्षतिपूर्ति भी है। कन्या मूल्य की प्रथा विशेषत: निम्न जातियों में प्रचलित है, उच्च जातियाँ इसे घृणा की दृष्टि से देखती हैं। स्मृतिकारों ने तो कन्या मूल्य देकर प्राप्त की गयी स्त्री को 'पत्नी' कहने से भी इन्कार किया है। इस प्रकार के दामाद के लिए 'विजामाता' शब्द का प्रयोग किया गया है। कैकेयी, गन्धारी और माद्री के विवाहों में उनके माता-पिता की कन्या मूल्य के रूप में बहुत अधिक धनराशि दिये जाने का उल्लेख मिलता है।

6. **गान्धर्व विवाह** (Gandharva Marriage)–मनु कहते हैं, "कन्या और वर की इच्छा से पारस्परिक स्नेह द्वारा काम और मैथुन युक्त भावों से जो विवाह किया जाता है, उसे गान्धर्व विवाह कहते हैं।" याज्ञवल्क्य पारस्परिक स्नेह द्वारा होने वाले विवाह को गान्धर्व विवाह कहते हैं। गौतम कहते हैं, "इच्छा रखती हुई कन्या के साथ अपनी इच्छा से सम्बन्ध स्थापित करना गान्धर्व विवाह कहलाता है।" प्राचीन समय में गान्धर्व नामक जाति द्वारा इस प्रकार के विवाह किये जाने के कारण ही ऐसे विवाहों का नाम गान्धर्व विवाह रखा गया है। वर्तमान में हम इसे प्रेम-विवाह के नाम से जानते हैं जिसमें वर एवं वधु एक-दूसरे से प्रेम करने के कारण विवाह करते हैं। इस प्रकार के विवाह में धार्मिक क्रियाएँ सम्बन्ध स्थापित करने के बाद की जाती हैं। कुछ स्मृतिकारों ने इस प्रकार के विवाह को स्वीकृत किया है तो कुछ ने अस्वीकृत। बौधायन धर्मसूत्र में इसकी प्रशंसा की गयी है। वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में इसे एक आदर्श विवाह माना है। दुष्यन्त का शकुन्तला के साथ गान्धर्व विवाह ही हुआ था।

7. **राक्षस विवाह** (Rakshasa Marriage)–मनु कहते हैं, "मारकर, अंग-छेदन करके, घर को तोड़कर, हल्ला करती हुई, रोती हुई कन्या को बलात् अपहरण करके लाना 'राक्षस' विवाह कहा जाता है। याज्ञवल्क्य लिखते हैं, 'राक्षसो युद्ध हरणात्' अर्थात् युद्ध में कन्या का अपहरण करके उसके साथ विवाह करना ही राक्षस विवाह है। इस प्रकार के विवाह उस समय अधिक होते थे जब युद्धों का महत्त्व था और स्त्री को युद्ध का पुरस्कार माना जाता था। महाभारत काल में इस प्रकार के विवाह के अनेक उदाहरण मिलते हैं। भीष्म ने काशी के राजा को पराजित किया और उसकी लड़की अम्बा को अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए उठा लाया। श्रीकृष्ण का रुक्मणी एवं अर्जुन का सुभद्रा के साथ भी इसी प्रकार का विवाह हुआ था। राक्षस विवाह में वर एवं वधु पक्ष के बीच परस्पर मारपीट एवं लड़ाई-झगड़ा होता है। इस प्रकार के विवाह क्षत्रियों में अधिक होने के कारण इसे 'क्षात्र-विवाह' भी कहा जाता है। आजकाल इस प्रकार के विवाह अपवाद के रूप में ही देखने को मिलते हैं।

8. **पैशाच विवाह** (Paishacha Marriage)–मनु कहते हैं, "सोयी हुई उन्मत्त, घबराई हुई, मदिरापान की हुई अथवा राह में जाती हुई लड़की के साथ बलपूर्वक कुकृत्य करने के बाद उससे विवाह करना पैशाच विवाह है। इस प्रकार के विवाह को सबसे निकृष्ट कोटि का माना गया है। वशिष्ठ एवं आपस्तम्ब ने इस प्रकार के विवाह को मान्यता नहीं दी है, किन्तु इस प्रकार के विवाह को लड़की का दोष न होने के कारण कौमार्य भंग हो जाने के बाद उसे सामाजिक बहिष्कार से बचाने एवं उसका सामाजिक सम्मान बनाये रखने के लिए ही स्वीकृति प्रदान की गयी है।

'सत्यार्थ प्रकाश' में 'ब्राह्म विवाह को सर्वश्रेष्ठ, प्रजापत्य को मध्यम एवं आर्ष, असुर तथा गान्धर्व को निम्न कोटि का बताया गया है। राक्षस विवाह को तो अधम तथा पैशाच विवाह को महाभ्रष्ट माना गया है। दैव, आर्ष, प्रजापत्य एवं राक्षस विवाह पूर्णत: समाप्त हो चुके हैं। डॉ. मजूमदार कहते हैं, "हिन्दू समाज अब केवल दो स्वरूपों को मान्यता देता है–ब्राह्म तथा असुर, उच्च जातियों में पहले प्रकार का और निम्न जातियों में दूसरे प्रकार का विवाह प्रचलित है। यद्यपि उच्च जातियों में असुर प्रथा पूर्णत: नष्ट नहीं हुई है।" वर्तमान समय में पढ़े-लिखें लोगों में गान्धर्व विवाह जिसे हम प्रेम-विवाह कहते हैं, का भी प्रचलन पाया जाता है।

क्या आप जानते हैं वर्तमान समय में हिन्दुओं में ब्राह्म, असुर, गन्धर्व एवं कहीं-कहीं पैशाच विवाह प्रचलित हैं।

नोट

12.5 सारांश (Summary)

- विवाह का शाब्दिक अर्थ है, 'वधू को वर के घर ले जाना।'
- विवाह स्त्री-पुरुष के पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की संस्था है।
- मरडॉक के अनुसार सभी समाजों में विवाह के तीन उद्देश्य हैं—यौन संतुष्टि, आर्थिक सहयोग, संतानों का समाजीकरण एवं लालन-पालन।
- हिन्दू धर्म में विवाह को एक संस्कार माना गया है।
- हिन्दू विवाह के प्रमुख आठ स्वरूप हैं—ब्राह्म विवाह, दैव विवाह, आर्ष विवाह, प्रजापत्य विवाह, असुर विवाह, गांधर्व विवाह, राक्षस विवाह, पैशाच विवाह।
- मुस्लिम विवाह धार्मिक कृत्य नहीं बल्कि धर्मनिरपेक्ष बंधन है। मुस्लिम गैर-मुस्लिम लड़की से भी शादी कर सकता है यदि वह यहूदी, ईसाई या गैर-मूर्तिपूजक धार्मिक संप्रदाय से हो। किंतु ये अधिकार मुस्लिम स्त्री को प्राप्त नहीं है।

12.6 शब्दकोश (Keywords)

1. **लेविरेट (Levirate)**—देवर-भाभी विवाह।
2. **सोरोरेट (Sororate)**—जीजा-साली विवाह।

12.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. विवाह का अर्थ तथा उद्देश्य क्या है?
2. विवाह की विशेषता अथवा महत्त्व क्या है?
3. विवाह के प्रकारों का संक्षिप्त वर्णन करें।
4. हिंदू विवाह के स्वरूपों का वर्णन करें।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. विषमलिंगियों 2. स्थायी संबंध 3. निर्धारण।

12.8 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. भारत में विवाह एवं परिवार—के.एम. कपाड़िया।
2. भारतीय समाज एवं सामाजिक संस्थाएँ—गुप्ता एवं शर्मा।